अधिगम
अंक 20 : सितम्बर 2021

भरहुत-स्थापत्य में अभिव्यंजित सामाजिक घटक

डॉ० दीप्ति मिश्रा*

मानव संस्कृति की एक मूल्यवान विरासत के रूप में 'कला' की परिगणना की गई है। भारतीय संस्कृति में तो कला को जीवन का एक महनीय अंग ही माना जाता है। कला के माध्यम से भारतीयों ने जिस पुनीत एवं शुभ दृष्टि को अभिव्यक्ति प्रदान की है, उस अभिव्यक्ति में इस भौतिक संसार के पीछे छिपे जीवन और प्रकृति की सनातन समता एवं विषमता तथा मानवीय तत्त्व परिलक्षित होते हैं। वास्तव में मानव प्रयास के इतिहास में भारतीय कला का अप्रतिम स्थान है। यह भारत वर्ष के विचार, धर्म, तत्त्वज्ञान और संस्कृति का दर्पण है।[1] भारतीय कला के क्षेत्र में ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी के काल का विशिष्ट महत्त्व है। इस काल में कला के क्षेत्र में देश के अनेक केन्द्रों में पाषाण घटित शिल्प एवं स्थापत्य का व्यापक प्रचार हुआ[2] तथा अनेक भव्य स्तूपों का निर्माण हुआ। इन स्तूपों में भरहुत के स्तूप एवं स्थापत्य का अग्रगण्य स्थान है। वस्तुतः भारत की प्राचीन कला परम्परा में भरहुत स्तूप का अग्रगण्य स्थान निर्विवाद है; साथ ही तत्कालीन लोक जीवन, धार्मिक एवं सामाजिक जीवन, उत्सव आदि के विभिन्न आयाम इसमें निरूपित हैं तथा ईसा से लगभग दो शती पूर्व के जनजीवन का एक अद्‌भुत कथालोक इसमें परिलक्षित होता है।[3]

भरहुत मध्यप्रदेश के सतना जिले में स्थित है।[4] यह सतना से 14.50 किलोमीटर दक्षिण[5] तथा ऊँचेहरा से 07 किलोमीटर उत्तर पूर्व में स्थित है।[6] भरहुत भारत की स्वतंत्रता के पूर्व नागौद रियासत के अन्तर्गत था। महाकाव्य काल (चौथी शताब्दी ई0 पू0) में इस नगर का नाम वरदावती था।[7]

ऐसा भी अनुमान लगाया जाता है कि 'भरहुत' नाम संभवतः भरों अथवा राजभरों के सम्पर्क में पड़ा। भरों ने कभी उत्तर एवं मध्य भारत के अनेक खण्डों में अपने राज्य स्थापित किये थे। यह भरहुत क्षेत्र भी कभी भरों के भोग का साधन बना, जिससे तीर भुक्ति (आधुनिक तिरहुत, बिहार)

* सह0उप0शि0नि0, राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, प्रयागराज

की भाँति उसका नाम भार मुक्ति पडा और कालान्तर में तिरहुत की भाँति ही भरहुत कहलाया।[8]

अपने समकालीन विशिष्ट बौद्धकला केन्द्र साँची की भाँति भरहुत किसी प्राचीन या प्रसिद्ध नगर के समीप स्थित नहीं था। यह साँची से लगभग 482 कि0मी0 उत्तर–पूर्वी दिशा में स्थित है। दक्षिण पश्चिम का जो मार्ग प्रतिष्ठान से चलकर श्रावस्ती तक जाता था भरहुत की भौगोलिक स्थिति उसके निकटवर्ती क्षेत्र में ही थी व इस स्थान के भौगोलिक महत्व के विषय में अधिक कुछ कहा नहीं जा सकता, किन्तु इस स्थान की प्रमुखता के कारण ही स्तूप 'भरहुत' में निर्मित किया गया हो।[10] धार्मिक भावनाओं से ओत–प्रोत धनी व्यापारी इस मार्ग से गुजरते हुए दर्शन की कामना से भरहुत में आते थे, और श्रद्धा–सुमन व भेंट अर्पित करते थे।[11]

वस्तुतः इस स्तूप का निर्माण तत्कालीन धार्मिक व सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया गया। अनेक छोटे–बड़े गृहस्थ, व्यापारियों ने इसके निर्माण में भाग लिया, जैसा उनके दान के सूचक छोटे–छोटे लेखों से ज्ञात होता है।[12]

भरहुत मुख्यतः एक सांस्कृतिक एवं धार्मिक केन्द्र था। भरहुत में स्तूप का निर्माण शुंगकाल (द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व) में हुआ था।[13] इस तथ्य की पुष्टि अभिलेखों से भी होती है। शुंगकाल में तोरण वेदिका तथा शिलाकर्म आदि के भेंट दिये जाने का उल्लेख भरहुत के अभिलेखों से प्राप्त होता है।[14] भरहुत स्तूप के पूर्वी तोरण पर शुंगकालीन राजा धनभूति का अभिलेख प्राप्त हुआ है,

जो इस प्रकार है–

1. सुगनं रजे राञो गागीपुतस विसदेवस
2. पुतेन गोतिपुतस आगरजुस पुतेन।
3. वाछिपुतेन धनभूतिन कारितं तोरणं।
4. सिलकमंत च उपंन।[15]

इस अभिलेख में शुंगकालीन वात्सीपुत्र धनभूति नामक राजा के पिता गोप्तीपुत्र अंगारद्युत, पितामह गार्गीपुत्र विश्वदेव आदि के नाम प्राप्त होते हैं। यह अभिलेख इस तथ्य का निश्चित प्रमाण है कि स्तूप का निर्माण शुंगकाल में ही हुआ था।[16]

वस्तुतः ईसा पूर्व दूसरी सदी में निर्मित भरहुत का स्तूप, स्तूप वास्तु का अप्रतिम उदाहरण है। इसे भारतीय कलाओं का आर्ष नमूना भी कहा

सकता है।[17] भरहुत स्तूप सम्प्रति पूर्णतः विनष्ट हो गया है। भरहुत में अब ऐसा कुछ भी नहीं है, जिससे इसके प्राचीन वैभव का अंश मात्र भी परिचय मिल सके, किन्तु यहाँ के स्तूप के अवशेषों में स्तम्भों और वेदिकाओं पर उत्कीर्ण शिलान्यासों से तत्कालीन समाज एवं संस्कृति की अपूर्व झांकी मिलती है। वस्तुतः ईसा से लगभग दो सदी पूर्व के जनजीवन का अक अप्रतिम दृश्यांकन भरहुत–स्थापत्य में परिलक्षित होता है।[18]

भरहुत स्तूप की खोज सन् 1873 ई0 में अलेक्जेण्डर कनिंघम महोदय ने किया था।[19] कनिंघम ने जब भरहुत स्तूप को सर्वप्रथम देखा तो लगभग पूरा स्तूप विनष्ट हो चुका था, केवल एक ओर छोटा सा 3 मीटर लम्बा और 1.80 मीटर ऊँचा भाग बच गया था। दक्षिण–पूर्व के इस अवशिष्ट भाग में दीए रखने के आले बने हुए थे। इसके अतिरिक्त एक तोरण द्वार कतिपय वेष्टिनी वेदिका भी कनिंघम महोदय को प्राप्त हुआ थी कालान्तर में पुरातात्विक शोधों एवं अन्वेषणों के फलस्वरूप भरहुत स्तूप के असंख्य पुरावशेष प्राप्त हुए जिन्हें सम्प्रति रामवन संग्रहालय, (सतना,) भारत कला भवन,(वाराणसी,) इलाहाबाद संग्रहालय, इलाहाबाद(प्रयागराज), पुरातत्व संग्रहालय, सागर विश्व विद्यालय, (सागर,म0प्र0,) प्रिंस ऑफ वेल्स संग्रहालय, (मुम्बई) तथा अमेरिका के फ्रीयर गैलरी में रखा गया है।[20]

भरहुत–स्थापत्य के अवशिष्ट अवशेषों के अध्ययन व अवलोकन के उपरान्त यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि भरहुत कला मौर्योत्तर कला का अप्रतिम उदाहरण है। मौर्योत्तर काल की कला जो विषय वस्तु तथा मूर्तिकला की दृष्टि से बौद्ध है, जनता के बड़े हिस्से के मन, परम्परा, संस्कृति और विचार धारा को कहीं ज्यादा प्रतिबिम्बित करती है। यह कला किसी भी अन्य चीज की अपेक्षा उस समकालीन भारतीय जीवन और जीवन के प्रति दृष्टिकोण पर एक उद्घाटक टिप्पणी अधिक है जिसकी अवधारणा तथा योजना प्रारम्भिक बौद्धधर्म में निर्मित की गयी थी। इस योजना से समाजों या उत्सव सम्मेलनों को अलग नहीं किया गया था। वस्तुतः भरहुत के अनेक चित्रों में ऐसे दृश्य परिलक्षित होते हैं, जिसमें नृत्य, गीत तथा वादन अपनी तमाम 'मादक प्रसन्नता' में प्रस्तुत है, और जहाँ जीवन के सभी प्रकार और सभी वर्गों के जीव भाग लेते हैं, तथा उन्हें अपना रूप प्रदान करते हैं।[22]

वस्तुतः ईसापूर्व दूसरी शताब्दी में बौद्धधर्म स्पष्टतः अपने जीवन के एक ऐसे दौर में पहुँच गया था जब यह अपने शिक्षक और उनके शिष्यों के युग से आगे बढ़ गया था, बौद्ध संघ फैलते जा रहे थे और संघाराम भी तेजी से उच्च और मध्य वर्गीय जनता के एक पर्याप्त हिस्से की धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के केन्द्र होते जा रहे थें। इन संघारामों को काफी हद तक संरक्षण राजाओं, कुलीनों, तथा व्यापारी वर्गों से प्राप्त होता था, और उनके साथ ही साथ शिल्पियों तथा उस बौद्ध जनसाधारण से भी जिसमें 'गहपति' या भूस्वामी और धी नागरिक मुख्य भूमिका निभाते थे। इस प्रकार भरहुत–कला के सामाजिक घटकों में राजाओं और कुलीनों से लेकर विभिन्न श्रेणियों के लोगों का तथा विभिन्न जातियों के वर्गों और विचारधाराओं का सम्मिश्रण आसानी से देखा जा सकता है।[23]

इस प्रकार यह भारतीय जनता की पहली संगठित एवं समन्वित कला गतिविधि का उदाहरण है। यह पहली बार भारतीय भूमि और खासतौर पर मध्यदेश में सदियों से विकसित होते जातीय, सामाजिक और धार्मिक मिश्रण तथा समन्वयन के फलों को व्यक्त करती है तथा देशज भारतीय कला का पहला अध्याय बन जाती है।[25]

वस्तुतः भरहुत का संसार तत्कालीन जीवन के विविध पक्षों से परिपूर्ण हैं। बौद्ध धर्म के दार्शनिकतापूर्ण प्रभाव के होते हुए भी भौतिक जीवन के विभिन्न आयामों का सरल निरूपण इसमें मिलता है। क्षण भंगुरता और उसके कारण व्याप्त दुख (सर्वं क्षणिकम्, क्षणिकम् सर्वम् दुःखम् दुःखम्) तथा तज्जन्य पीड़ा के ही विश्लेषण के बजाय बौद्ध धर्म द्वारा अभिसिंचित लोकमानस का स्वरूप भरहुत स्थापत्य एवं शिल्प से प्राप्त होता है। इस समन्वित रूप के आधार पर, भरहुत की कला को बौद्ध कला नहीं, अपितु लोक मानस की एक सर्जना माना जा सकता है। धार्मिक दृश्य अपेक्षाकृत कम संख्या में हैं। यद्यपि बुद्ध की पूजा को लक्ष्य बनाकर और ध्यान में रखकर इसमें मूर्ति सज्जा की सृष्टि की गयी, तथापि तत्कालीन जीवन के विविध भौतिक पक्ष अनायास ही भरहुत की कला में समाहित हो गए।[26]

मनुष्यों के घर, व्यवसाय के साधन, देवों और राजाओं की मूर्तियां, आवागमन के साधन–रथ, गाड़ियाँ, नौकाएं, विभिन्न प्रकार की वेशभूषा, शृंगार के साधन, अस्त्र–शस्त्र, आभूषण आदि इन कठोर पाषाणों पर सरलता के साथ उत्कीर्ण हैं, जो भारतीय जीवन को प्रतिबिम्बित करने में समर्थ हैं।[27]

भरहुत – स्थापत्य में अभिव्यंजित सामाजिक घटकों का विवेचन निम्नलिखित आधारों पर किया जा सकता है–

- समाज एवं उसके विभिन्न वर्ग
- वेशभूषा एवं आभूषण।
- दैनिक उपयोग की वस्तुएं।
- भवन।
- आमोद– प्रमोद के साधन।

समाज एवं उसके विभिन्न वर्ग–

भरहुत स्थापत्य में अभिव्यंजित सामाजिक अनुवर्गों में विशेषतः राजा, मंत्री, पुरोहित, परिव्राजक तपस्वी, श्रेष्ठि तथा विभिन्न व्यवसाय के व्यक्ति, निम्नवर्गीय परिचारक/परिचारिकाओं के अंकन प्रमुख है। ईसापूर्व दूसरी शताब्दी में वर्णाश्रम धर्म की स्थापना हो चुकी थी, परन्तु भरहुत के विषयों का मूल परिवेश बौद्ध विचार धारा से प्रभावित था। अतः भरहुत में अंकित समाज का वर्गीकरण वर्णाश्रम व्यवस्था के आधार पर करना तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता। दृश्यों के महत्त्व को दृष्टिगत रखते हुए भरहुत के सामाजिक अनुवर्गों की व्याख्या निम्नलिखित वर्गीकरण के आधार पर की जा सकती है–

- राजसमुदाय और उससे सम्बन्धित पक्ष।
- सामान्य व्यक्तियों का अंकन
- स्त्रियाँ
- कुलीन वर्ग।

भरहुत शिल्प एवं अभिलेखों में राजसमुदाय एवं उससे सम्बन्धित विविध पक्षों के अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं। इन उदाहरणों में से कुछ ऐतिहासिक हैं तथा कुछ जातकों में वर्णित राजसमुदाय से सम्बन्धित कथा प्रसंग हैं।[27] भरहुत स्थापत्य में उल्लिखित ऐतिहासिक राजाओं, राजकुमारों एवं रानियों में धनभूति के पिता गौप्तीपुत्र अंगारद्युत (प्राकृत आगरजुस) पितामह गार्गीपुत्र विश्वदेव (प्राकृत गागीपुतस विसदेव), रानी नागरक्षिता, मगध नरेश हर्यंकवंशी अजातशत्रु तथा कोसल नरेश प्रसेनजित प्रमुख हैं।[29]

धनभूति का उल्लेख भरहुत स्तूप के पूर्वी तोरण द्वार पर उत्कीर्ण अभिलेख में हुआ है।

यह अभिलेख इस प्रकार है–

1. सुगनं रजे रञो गागीपुतस विसदेवस।
2. पौतेण गोतिपुतस आगरजुस पुतेण।।
3. वाछिपुतेन धनभूतिन कारितं तोरनां।
4. सिलाकमंतो च उपंण।।[30]

अर्थात् शुंगों के राज्यकाल में तोरणद्वार का निर्माण हुआ, प्रस्तरीकरण की प्रक्रिया धनभूति के द्वारा सम्पन्न हुई।

इसी प्रसंग में भरहुत के एक वेष्टनी अभिलेख का उल्लेख किया जा सकता है, जिसमें धनभूति को संदर्भित किया गया है। इस अभिलेख को भी पहली बार कनिंघम ने ही प्रकाशित किया था। इस अभिलेख में धनभूति को राजा की उपाधि दी गई है (धनभूतिन राजानो)।[31]

वस्तुतः धनभूति शुंगों के अधीनस्थ राजा रहा होगा, तभी उसने शुंगों के शासन काल का उल्लेख किया। शुंगों के राज्यकाल में उसने भरहुत के तोरणद्वारों का निर्माण कराया था।[32] धनभूति का समय ईसापूर्व प्रथम शताब्दी से कुछ पहले का माना जाता है।[33]

भरहुत के अभिलेखों में राजाओं के लिए 'राजा', 'राञो', 'राजन', अथवा 'अधिराज' शब्दों का प्रयोग किया गया है। राजा के पुत्र के लिए 'कुमार' और राजा की पत्नी के लिए 'देवी' का प्रयोग किया गया है। भरहुत के अभिलेख में उल्लिखित धनभूति नामक राजा के वंशवर्णन में वंश की मातृमूलक परम्परा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। भरहुत अभिलेख में एक स्थान पर नागरक्षिता नाम की रानी का उल्लेख मिलता है। [34]

भरहुत के शिला–उद्धृत अंकनों में विभिन्न राजाओं से सम्बन्धित अनेक अन्य दृश्य भी प्राप्त होते हैं। इनमें प्रसेनजित तथा अजातशत्रु से सम्बन्धित प्रकरण भरहुत–वेदिका के दो स्तम्भों पर प्राप्त होता है। इन दोनों स्तम्भों को क्रमशः प्रसेनजित तथा अजातशत्रु स्तम्भ कहा जाता है। इन दोनों स्तम्भों पर शिल्पांकित दृश्यों में कोशल के राजा प्रसेनजित तथा मगध के राजा अजातशत्रु को बृद्ध की पूजा करते हुए दिखलाया गया है। ये दृश्य बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित ऐतिहासिक घटनाओं की ओर भी संकेत करते हैं।[35] कोशल के राजा प्रसेनजित से सम्बन्धित दृश्य में द्वितल भवन का निरूपण है, जिसके आन्तरिक भाग में दो व्यक्तियों द्वारा धर्मचक्र की पूजा को दिखलाया गया है दूसरी ओर एक चतुरश्व रथ है, जिसपर अपने सारथि सहित प्रसेनजित विराजमान है। राजत्व चिह्न स्वरूप उनका छत्र और साथ में दो अन्य राजसेवक दिखाए गए है। राजा के रथ के आगे दो

व्यक्ति दौड़ते हुए और उनके आगे दो अश्वारोही दिखाए गए है। कलाकार का अभिप्राय प्रसेनजित द्वारा बुद्ध की प्रदक्षिणा करने का दृश्यांकन अभिप्रेत था। प्रसेनजित बुद्ध की वन्दना करते हुए प्रदर्शित किए गए हैं।[36]

दीघनिकाय के 'सामञ्ञफलमुन्त' में यह वर्णन है कि अपने पिता बिम्बिसार की मृत्यु के बाद अजातशत्रु बुद्ध के दर्शनार्थ गृद्धकूट पर्वत पर गया था।[37] इस ऐतिहासिक वर्णन के दृश्य का अंकन भरहुत–स्तूप पर तीन दृश्यों में प्रदर्शित किया गया है। अजातशत्रु की यात्रा, उसका हाथी से नीचे उतरना तथा बुद्ध के आसन की पूजा करने का दृश्य उत्कीर्ण है। आसन के बीच में बुद्ध के पदचिह्न प्रतीक के रूप में प्रकट हो रहे है। उनके साथ जीवक भी है, जो चार अन्य स्त्रियों के साथ नमस्कार मुद्रा में खड़े हुए दिखाया गया है, साथ ही ब्राह्मी लिपि में लेख अंकित है। अजातशत्रु भगवतो वंदते।[38]

राजाओं के जीवन के विविध पक्षों का संकेत भरहुत–शिल्प में उद्भृत अनेक जातक दृश्यों से भी प्राप्त होता है।[39] एक वेदिका स्तम्भ पर 'मूगपक्ख जातक' का अंकन है। दृश्य में राजा को आसन पर बैठा दिखाया गया है। राजा द्वारा डाकुओं को दंड दिया जा रहा है इस दृश्य में सभासदों का भी अंकन है। राजा की सभा से सम्बन्धित दृश्यों का निरूपण मुख्यतः दण्ड विधान के प्रकरण में ही किया गया है।

राजा को परिवार के सदस्यों सहित भी कतिपय दृश्यों में अंकित किया गया है। 'महाजनक जातक' तथा 'महाबोधि जातक' में राजा को उनकी पत्नी के साथ अंकित किया गया। मूगपक्ख और महादेव जातक के अंकन में राजा को अपने पुत्र के साथ दिखाया गया है। 'कण्डरी जातक' में राजा की एक चरित्रहीन पत्नी का विवरण प्राप्त होता है, किन्तु 'महाजनक जातक' में राजा जनक की पतिपरायणा पत्नी का वर्णन है जो बराबर उनका अनुसरण करती हुई उन्हें सन्यास लेने से विमुख करने का प्रयत्न करती है।[41]

भरहुत–स्थापत्य में उद्धृत कुछ जातक दृश्यों से राजाओं के व्यसन, मनोरंजन एवं मनोविनोद पर भी प्रकाश पड़ता है। उदाहरणतया एक वेदिका–स्तंभ पर 'अंडभूत जातक' का अंकन है जिसमें द्यूतव्यसनी राजा का वर्णन प्राप्त होता है यह राजा अपने पुरोहित के साथ द्यूतक्रीडा में रत रहता है। राजाओं के मनोरंजन के साधनों में द्यूतक्रीडा के अतिरिक्त मृगया का

भी विशेष महत्त्व था। राजा द्वारा आखेट का अंकन 'रूरजातक' के दृश्य से प्राप्त होता है, इसमें राजा को शर–संधान करते हुए दिखलाया गया है।[42]

भरहुत–स्थापत्य में राजसमुदाय के विविध पक्षों के अंकन के साथ–साथ सामान्य व्यक्तियों के भी विभिन्न अंकन प्राप्त होते हैं। सामान्य व्यक्तियों से सम्बंधित दृश्यों में मुख्यतः कर्मकार (लोहार), इषुकार (बाण बनाने वाला), लुब्धक (शिकारी), आरामक (माली), नापित (नाई) आदि के अंकन प्राप्त होते हैं।[43] इनके अंकन कथाओं के संदर्भ में हैं। यदा–कदा इनके साथ इनके व्यवसाय से संबंधित उपकरणों का अंकन किया गया है। भरहुत–शिल्प में इन सामान्य व्यक्तियों के अंकन से यह सिद्ध होता है कि स्तूप–निर्माण में केवल धनिकों का ही सहयोग प्राप्त नहीं हुआ था, वरन् सामान्य वर्ग के व्यक्तियों ने भी यथा शक्ति सहयोग प्रदान किया था।[44]

वस्तुतः ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में बौद्ध धर्म स्पष्टतः अपने जीवन के एक ऐसे दौर में पहुँच गया था, जब यह अपने शिक्षक और उनके शिष्यों के युग से आगे बढ़ गया था और बौद्ध संघ फैलते जा रहे थे तथा संघाराम तेजी से उच्च और मध्यवर्गीय जनता के पर्याप्त हिस्से की धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के केन्द्र होते जा रहे थे। इन संघारामों को काफी हद तक संरक्षण राजाओं, कुलीनों तथा व्यापारी वर्गों से प्राप्त होता था और उसके साथ ही साथ शिल्पियों तथा सामान्य जनसाधारण से भी संरक्षण प्राप्त होता था। अब बौद्ध धर्म बिहार तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश तक सीमित एक स्थानीय आंदोलन नहीं रह गया था, बल्कि काफी दूर–दूर तक फैल चुका था। धर्म के चाक्षुष प्रस्तुतीकरण के लिए जिम्मेदार तथा उसे आम जनता तक पहुँचाने वाले कलाकार तथा शिल्पी भी कला और शिल्पसंघों या श्रेणियों में संगठित थे। रंगकर्मी, 'थपति' या 'स्थपति', तच्छक या शिल्पी, वद्धकि या बढ़ई और पाषाण कोट्टक सबके सब संभवतः अपने संघ बनाये हुए थे, जिससे नागरिक संगठन के विकसित बोध का भास होता है। इन कलाकारों और शिल्पियों ने एक तरफ उच्च वर्गों तथा नागरिक जीवन की सामाजिक विचार धारा के अनुभव और विचार को एवं दूसरी तरफ निम्न और तिरस्कृत जातियों, वर्गों और उनके आदिम लोकजीवन की सामाजिक विचार धारा के अनुभव और विचार को एक में मिला दिया था।

इस प्रकार भरहुत कला के सामाजिक घटकों में राजाओं और कुलीनों से लेकर विभिन्न श्रेणियों के लोगों का तथा विभिन्न जातियों के वर्गों और विचार धाराओं का मिश्रण आसानी से देखा जा सकता है।[45]

भरहुत में विभिन्न शिल्पंक्ति दृश्यों तथा अभिलेखों के माध्यम से सामान्य व्यक्तियों तथा उनके व्यवसायों आदि का उल्लेख किया गया है। उदाहरणतया – अभिलेखों में बुद्धरक्षित नामक रूपकारक (मूर्तिकार), सुलग्ध नामक असवारक (अश्वरक्षक), वेडुक नामक आरामक (वनरक्षक), इषुकार (तीर बनाने वाला), अतुदेसक (विहार में भोजन वितरण की व्यवस्था करने वाला), गृहपति (भूमि का स्वामी) आदि का उल्लेख प्राप्त हेाता है।[46]

अभिलेखों के अतिरिक्त दृश्यों द्वारा अन्य व्यवसायों में संलग्न व्यक्तियों के विषय में सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, जैसे – 'मूगपक्ख जातक' के दृश्य में राजा का सारथी, 'मघादेव जातक' के दृश्य में नापित, 'सूचि जातक' के दृश्य में कर्मकार, 'आरामदूसक जातक' के दृश्य में आरामक, 'छदन्त जातक' के दृश्य में राजा का शिकारी और 'निग्रोधमिग जातक' के दृश्य में राजा का रसोइया अंकित किये गए है।[47]

इस प्रकार समाज के सामान्य वर्ग की कार्य प्रणाली, व्यवसाय तथा उनके जीवन सम्बंधी जानकारी भरहुत के दृश्यों एवं अभिलेखों से प्राप्त होती है।

भरहुत स्थापत्य में शिल्पांकित दृश्यों में कुलीन वर्ग के व्यक्त्यिों के भी विभिन्न अंकन प्राप्त होते है। कुलीन वर्ग के व्यक्तियों में ब्राह्मण तथा तपस्वी, धनिक, गृहपति तथा श्रेष्ठि उल्लेखनीय हैं।[48]

ब्राह्मणों से संबंधित अनेक दृश्य भरहुत के शिलांकनों में मिलते हैं। ब्राह्मणों के लिए राजा का संरक्षण महत्त्वपूर्ण माना गया है। 'भिस जातक' में ब्राह्मण तपस्वियों का उल्लेख है, जो धर्म में निरत थे और जीवन की सार्थकता निभा रहे थे।[50] ब्राह्मणों के वानप्रस्थ जीवन के विभिन्न रूपों का अंकन भरहुत के दृश्यों में प्राप्त है, जैसे–ये पर्णशालाओं में रहते थे।[51] और अग्नि चर्या से सम्बन्धित धार्मिक कृत्यों में विश्वास रखते थे।[52] भिक्षाटन इनके परिव्राजक जीवन का प्रमुख अंग था।[53]

धनिक वर्ग में श्रेष्ठियों की प्राचीन समाज में विशेष स्थिति थी। भरहुत के अनेक दृश्यों में इन श्रेष्ठियों का अनेकशः अंकन प्राप्त होता है।

उदाहरणतया भरहुत की एक वेदिका पर अनाथ पिंडक श्रेष्ठि द्वारा जेतवन बिहार के दान की घटना का विस्तृत चित्रण किया गया है। जेतवन

के दान की कथा में बताया गया है कि श्रावस्ती का धनिक सेठ अनाथ पिंडक ने राजगृह में आकर संघ को निमंत्रित किया कि भगवान का वर्षावास श्रावस्ती में हो। अतः धर्म के प्रचार हेतु बुद्ध ने वहाँ जाना स्वीकार कर लिया और आदेशानुसार कुटिया बनाने की तैयारी होने लगी। वर्षावास हेतु श्रेष्ठि अनाथ पिंडक ने जेत नामक राजकुमार से उसका एक बाग खरीदने की बात की। राजकुमार जेत ने श्रेष्ठि से उतना द्रव्य मूल्य माँगा, जितना बागीचे के भू–भाग पर फैलाया जा सके। श्रेष्ठि अनाथ पिंडक ने इसे स्वीकार कर लिया और उसने जेतवन खरीद कर उसे बौद्ध संघ को दान कर दिया।

इस घटना का अंकन भरहुत की वेदिका पर विस्तार से किया गया है। इस दृश्य में बैलगाड़ी से कार्षापण जमीन पर बिछाते हुए दिखाया गया है। मध्यभाग में अनाथ पिंडक को एक जलपात्र लेकर उद्यान का दान करते हुए प्रदर्शित किया गया है। इस दृश्य की पहचान हेतु–'जेतवन अनाथ पेडिको देति कोटि संहतेन केतो–लेख उत्कीर्ण है। इस अभिलेख से स्पष्ट हो जाता है कि एक करोड़ की मुद्राएं बिछाकर खरीदे गए जेतवन का दान अनाथ पिडिंक कर रहा है।[54]

भरहुत–शिल्प में श्रेष्ठियों एवं उनके विभिन्न क्रियाकलापों का अंकन महाउम्मग जातक, रूप जातक, सुजात जातक के दृश्यों में प्राप्त होता है।[55]

भरहुत के विभिन्न शिल्पाकंनों में स्त्रियों के भी विविध अंकन प्राप्त होते हैं। एक ओर सती साध्वी, कुशल, धर्मनिष्ठ, तपस्विनी स्त्रियों का वर्णन हैं तो दूसरी ओर कुटिल एवं चरित्रहीन स्त्रियों का भी उल्लेख है। अंडभूत तथा कंडरिकी जातक से सम्बन्धित शिल्पाकंनों में एक ओर कुटिल स्त्रियों का उल्लेख है तो वहीं दूसरी ओर महाउम्मग जातक की अमरा देवी, तक्कारिय जातक की किन्नरी, भिस जातक की ब्राम्हण तपस्विनी जैसी धर्म निष्ठ एवं महान स्त्रियों के भी विवरण प्राप्त होते है।[56]

भरहुत के शिल्पांकनों से तत्कालीन वेशभूषा एवं आभूषणों पर भी सम्यक प्रकाश पड़ता है। उस युग में साधारणतया तीन प्रकार के वस्त्रों के पहनने की प्रथा थी। ये तीन वस्त्र थे–अन्तरवासक (धोती), उत्तरासंग (दुपट्टा), तथा उष्णीष (पगड़ी[57])

भरहुत के अर्द्धचित्रों से ज्ञात होता है कि पुरुष धोती पहनते थे, जिसका एक छोर कमर में लपेट लिया जाता था और लांग पीछे खोंस ली जाती थी। धोती घुटनों के जरा नीचे और पैरों के मध्य भाग पहुँचती

दिखलाई गयी है। धोती बिना किसी अलंकार के सादी होती थी। धोती के साथ लोग दुपट्टे, कमरबंद, पटके और पगड़ियाँ पहनते थे।[58]

भरहुत शिल्प में दो तरह से उष्णीष (पगड़ी) बाँधने का दृश्य प्राप्त होता है। एक में बाल का सिर पर जूड़ा बाँध दिया जाता था और पगड़ी के दो फेंटे मस्तक की ठीक बीच में से ले जाकर जूड़ा ढ़क दिया जाता था और उसके दोनों छोर खोंस दिये जाते थे। भारी उष्णीश(पगड़ी) में पूरा सिर ढँक दिया जाता था।[59]

भरहुत–स्थापत्य के विभिन्न शिल्पांकित अर्द्धचित्रों में स्त्रियों के वेश–भूषा पर भी प्रकाश प्रकाश पड़ता है। स्त्रियाँ धोती अथवा साड़ी पहने परिलक्षित होती हैं। चुन्नटदार साड़ियाँ भारी–भरकम करधनी और कमरबंद से बँधी होती थीं। स्त्रियों के शरीर का ऊपरी भाग खुला हुआ दिखलाया गया है। स्त्रियाँ कभी–कभी पगड़ी भी पहनती थी। चन्द्रा यक्षिणी की वेश–भूषा में एक संभ्रान्त नारी के पहनावे का पता चलता है। वह घुटने तक धोती पहने हुए हैं। उसके कमर में सतलड़ी करधनी, और कामदार कमरबंद है। सिर उसका एक कामदार ओढ़नी से ढ़का हुआ है।[60] सामान्यतया रानियों की वेश–भूषा अन्य स्त्रियों के समान ही है। इस प्रकार के अंकनों में कण्डरिकी की पत्नी एवं माया देवी की आकृतियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।[61]

भरहुत शिल्प से तपस्वियों एवं साधुओं की वेशभूषा पर भी विशिष्ट प्रकाश पड़ता है। भरहुत के वेसंतर जातक के दृश्यों में ब्राह्मणों एवं तपस्वियों के वेशभूषा का अंकन स्पष्ट रूप से प्राप्त होता है। इसमें इन्हें कटि से घुटने तक की लम्बी शाटक पहने, उत्तरीय (मृगचर्म) धारण किये, दाढ़ी सहित लम्बे खुले बाल अथवा जूड़ा बना हुआ या कुटिल केश सहित दिखलाया गया है। साथ ही उन्हें वक्रदण्ड, भिक्षापात्र, कमण्डल एवं यज्ञोपवीत धारण किये हुए दिखलाया गया है।[62]

भरहुत के अर्द्धचित्रों से निम्नवर्ग के व्यक्तियों की वेशभूषा पर भी प्रकाश पड़ता है। सामान्य एवं निम्नवर्ग के व्यक्ति एक 'शाटक' ही धारण करते थे। उत्तरीय का प्रचलन इनमें नहीं था। उदाहरणार्थ–'छदन्त जातक' के एक दृश्य में सोनुत्तर को कमर से घुटने तक का काषाय वस्त्र पहने हुए दिखलाया गया है। सिर पर पगड़ी भी अंकित है। अनाथ पिण्डक का सेवक भी इसी प्रकार शरीर के अधोभाग को वस्त्रान्वित किये सिर पर पगड़ी पहने दिखलाया गया है। 'मूगपक्ख जातक' के रथ चालक का,

निग्रोधमिग जातक के राजा के रसोइये का तथा 'आरामदूसक जातक' के आरामक का ऐसा ही अंकन है।[63]

भरहुत शिल्प से तत्कालीन आभूषणों पर भी प्रकाश पड़ता है। कलाकारों ने आभूषणों के अंकन में अपने पूर्ण कौशल एवं दक्षता का परिचय दिया है। दन्तकर्म एवं काष्ठशिल्प से प्राप्त महीन पच्चीकारी और नक्काशी का उपयोग उसने आकृतियों में अंकित आभूषणों की सज्जा में किया गया है। भरहुत–शिल्प से विदित होता है कि स्त्रियाँ अनेक प्रकार के आभूषण धारण करती थीं। इन आभूषणों में कानों में कुण्डल, कलाई पर कटक, मस्तक पर ललाटिका, बाँहों में भुजबंध, सिर पर मौक्तिक जाल, गले में ग्रैवेयक, कटि प्रदेश पर अनेक लरों वाली मेखला, छुद्र घंटिका, पैरों में पाजेब आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पुरुषों के आभूषण में कुण्डल, ग्रैवेयक हार, भुजबंध और कटक उल्लेखनीय हैं। नारी–मूर्तियों में विभिन्न वेणियों का जैसे– द्विवेणी तथा चतुर्वेणी का अंकन मिलता है।[64]

भरहुत–स्थापत्य में शिल्पांकित विभिन्न दृश्यों में अनेक प्रकार के भवनों की आकृति परिलक्षित होती है। भरहुत अभिलेखों में भवनों के लिए कोसम्ब कुटी, गंधकुटी और प्रासाद तीन शब्द प्राप्त होते हैं।

भरहुत अभिलेखों में उल्लिखित 'कोसम्बकुटी' तथा 'गंधकुटी' शब्द विचारणीय है। कोसम्बकुटी शब्द का आशय अज्ञात है, किन्तु कौशाम्बी नगर के नाम से इसका सम्बन्ध स्पष्टतः ध्वनित होता है। संभवतः यह बुद्ध से सम्बन्धित कौशाम्बी नगर में स्थित कोई विशेष भवन था, किन्तु इसका कोई उल्लेख बौद्ध साहित्य से प्राप्त नहीं होता है। 'गंधकुटी' शब्द का उल्लेख बौद्ध साहित्य में अनेकशः स्थल पर प्राप्त होते हैं। बुद्ध के विहार स्थित निवास स्थान के लिए सामान्यतया गंधकुटी का उल्लेख बौद्ध साहित्य से प्राप्त होता है।[65]

भरहुत शिल्प में उद्भृत अनेक शिलाकंनों में प्रासादों का उल्लेख प्राप्त होता है। इनमें 'वैजयन्त प्रासाद' एक त्रितल प्रासाद है, जिसके विभिन्न तल वेदिका सहित बने हुए हैं और इन पर मेहराब युक्त गवाक्ष है। प्रासादों में विभिन्न प्रकार के शीर्षयुक्त स्तम्भों का अंकन भी किया गया है। प्रासाद सामान्यतः शिखान्त युक्त हैं। भरहुत में सादे एवं शिखान्तहीन भवन भी दर्शित है। ये भवन तल रहित है, जिससे अनुमान होता है कि संभवतः ये बाँस और छप्पर के बने सादे निवासगृह थे, जो सामान्य व्यक्तियों के

लिए थे। ये भवन एकाकी अथवा समूहों में दर्शाये गए हैं। समूह वाले भवन संभवतः ग्रामों की ओर संकेत करते हैं।[66]

भरहुत–स्थापत्य में अभिव्यंजित शिल्प कला में दैनिक जीवन में उपयोग आने वाली वस्तुओं का भी यथार्थ अंकन हुआ है। उदाहरणार्थ नित्यप्रति के उपयोग में आने वाले पात्रों के विविध रूप प्राप्त होते हैं जैसे–फैली हुई तश्तरियाँ, कटोरे, सुराही, कमण्डलु आदि। कमण्डलु का उपयोग धार्मिक कृत्यों के अतिरिक्त सामान्यतया पानी पीने के लिए पानी भी होता था। मायादेवी के दृश्य में उनके सिरहाने रखा हुआ कमण्डलु इस ओर संकेत करता है। तपस्वियों एवं साधुओं के साथ कमण्डलु का अंकन भरहुत में प्रायः प्राप्त होता है। इनके अतिरिक्त बिनी हुई टोकरियाँ एवं घट का अंकन विभिन्न दृश्यों से प्राप्त होता है। मायादेवी के दृश्य में दीपधारक दण्ड पर रखे हुए दीपक का अंकन है। घरेलू वस्तुओं में दीपधारक का भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान रहा होगा। इन विभिन्न पात्रों तथा घरेलू वस्तुओं के निर्माण के लिए मृत्तिका एवं काष्ठ का उपयोग किया जाता था।[67]

शय्या एवं आसनों का अंकन भी भरहुत–शिल्प में प्राप्त होता है। माया देवी को शय्या पर सुषुप्त दिखलाया गया है। बौद्ध–भिक्षुओं के लिए विभिन्न पीठिकाओं, आसंदिकाओं एवं शय्याओं का उल्लेख 'चुल्लवग्ग' के छठें अध्याय में प्राप्त होता है। भरहुत–शिल्प में सामान्य पीठिकाओं, भिक्षुओं द्वारा प्रयुक्त पीठिकाओं तथा राजाओं द्वारा प्रयुक्त आसंदिकाओं एवं पीठिकाओं का अंकन किया गया है। इनमें कुछ पीठिकाएँ आधुनिक मोढ़ों की भाँति है।[68]

भरहुत शिल्प में रज्जुजाल से बँधे हुए पात्रों एवं घटों का भी अंकन प्राप्त होता हैं। भारी वस्तुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के लिए बहँगी (विहंगिका) का उपयोग होता था। निरन्तर भ्रमण करने वाले परिव्राजक अपनी वस्तुओं को विहंगिका द्वारा ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते थे। ब्रह्मचारी अपने गुरूओं के लिए बहँगी द्वारा जल लाते थे, आरामक तालाब एवं नदी से जल लाकर पौधों का सिंचन करते थे। इन सभी के सन्दर्भ में विहंगिका का अंकन भरहुत–शिल्प में किया गया है।[69]

भरहुत–शिल्प से तत्कालीन यातायात के साधनों पर भी प्रकाश पड़ता है। यातायात के साधनों में मुख्यतः बैलगाड़ियों, रथों एवं नौकाओं का उपयोग किया जाता था। भरहुत में अंकित बैलगाड़ियों का स्वरूप वही है जो आजकल की बैलगाड़ियों का है। राजाओं की सवारी के लिए चतुरश्व

रथ का अंकन प्राप्त होता है। प्रसेनजित से सम्बन्धित दृश्य में रथ पर बैठे सारथि के अतिरिक्त राजा के साथ एक छत्र धारक सेवक का भी अंकन प्राप्त होता है। स्थल मार्गों पर हाथी और घोड़े भी वाहन रूप में प्रयुक्त होते थे। अनेक दृश्यों में सैनिकों तथा राजपुरूषों को इन पशुओं पर आरूढ़ दिखलाया गया है। जलयात्रा के लिए नौकाओं का उपयोग होता था।[70]

इन विभिन्न दैनिकोपयोगी वस्तुओं के साथ राजकीय साज सज्जा एवं अस्त्र–शस्त्रों का उल्लेख भी समीचीन है। सैनिकों को विभिन्न प्रकार के ध्वज धारण किये हुए दिखलाया गया है। ध्वज के अतिरिक्त दंड एवं छत्र का भी अंकन मिलता है। अस्त्र शस्त्रों में धनुष, तीर, खड्ग एवं त्रिशूल का अंकन प्राप्त होता है।[71]

भरहुत स्थापत्य के विभिन्न अर्द्धचित्रों से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में उत्सवों तथा आमोद–प्रमोद का विशेष महत्व था। वस्तुतः भरहुत की कला किसी भी अन्य चीज की अपेक्षा उस समकालीन भारतीय जीवन और जीवन को प्रति दृष्टिकोण पर एक उद्घाटक टिप्पणी अधिक है, जिसकी अवधारणा तथा योजना प्रारम्भिक बौद्ध धर्म ने निर्मित की थी। इस योजना में समाजों, उत्सवों, सम्मेलनों को अलग नहीं किया गया था। वस्तुतः इन चित्रों में ऐसे दृश्य है, जिनमें नृत्य, गीत तथा वादन अपनी तमाम 'मादक प्रसन्नता' में प्रस्तुत है, और जहाँ जीवन के सभी प्रकार और सभी वर्गों के जीव भाग लेते हैं, तथा उन्हें अपना रूप प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए–भरहुत में प्रसेनजित स्तम्भ के बाहरी फलक के निचले भाग की नक्काशी में 'साडिक समंदम तुरम देवानम्'–'नाटकीय अभिनय से प्रसन्न देवताओं का सुखद मादक संगीत'–वाक्य के साथ चार दिव्य नर्तकियों अलम्बुषा, मिश्रकेशी, पद्मावती तथा सुभद्रा के नृत्यों का निदर्शन कराने वाला दृश्य है। इस दृश्य में देवताओं का मुदित समाज दिखलाया गया है। इस समुदाय में बायीं ओर आठ स्त्रियाँ वाद्यवृन्द के साथ बैठी हुयी है। उनके हाथों में वीणा, मृदंग तथा शम्या(मजीरा) है। दो स्त्रियाँ करतल ध्वनि करते हुए प्रदर्शित है। दाहिने ओर चार अप्सराएं–अलम्बुषा, मिश्रकेशी, पद्मावती तथा सुभद्रा–नृत्य करते हुए उत्कीर्ण है।[72]

भरहुत स्थापत्य में 'चूड़ा–उत्सव' से सम्बन्धित एक अन्य दृश्य का भी अत्यंत मनमोहक अंकन हुआ है। इस दृश्य में चार सेविकाओं सहित इन्द्र अंकित हैं। 'महाचूड़ा' इन्द्र द्वारा चूड़ामाणि चैत्य में स्थापित किया गया

है। चैत्य के समीप चार अप्सराओं के साथ चार पुरूष एवं तीन स्त्रियाँ विभिन्न वाद्ययंत्रों के साथ दिखलाई गई हैं।[73]

भरहुत के अर्द्धचित्रों से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में नृत्य, गायन, नाटक आदि के अतिरिक्त मल्ल युद्ध एवं नट–लीला भी आमोद–प्रमोद के अन्य प्रमुख साधन थे। मल्ल युद्ध एवं नट लीला से सम्बन्धित दो दृश्यों का अंकन भरहुत के अर्द्धचित्रों में हुआ है। एक में दो पुष्टकाय व बलिष्ठ मल्ल परस्पर मल्ल युद्ध करते हुए दिखाये गए हैं। दूसरे में भाँति–भाँति के वस्त्र धारण किये विभिन्न व्यक्तियों को एक पिरामिड बनाते हुए दिखलाया गया है, जो किसी नट लीला से सम्बन्धित है।[74]

वस्तुतः भरहुत–स्थापत्य में तत्कालीन सामाजिक जीवन के विविध पक्षों का अत्यंत सजीव एवं सुंदर शिल्पाकंन हुआ है। वास्तव में यह भारतीय जनता की पहली संगठित एवं समन्वित कला–गतिविधि का अद्वितीय उदाहरण है। भरहुत का संसार तत्कालीन सामाजिक जीवन के विविध पक्षों को अत्यंत सरलता एवं सहजता के साथ प्रतिबिम्बित करते हुए भारतीय कला का एक अप्रतिम उदाहरण बन जाता है।

सन्दर्भ सूची –

1. अग्रवाल, वासुदेव शरण : भारतीय कला, तृतीय पुनर्मुद्रण संस्करण सन् 2000, वाराणसी, पृष्ठ–1
2. अग्रवाल, वासुदेव शरण : पूर्वोक्त, पृष्ठ 131
3. मिश्र, रमानाथ, भरहुत : प्रथम संस्करण, 1971, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृष्ठ–15
4. कनिंघम, ए0, द स्तूप ऑफ भरहुत : वाराणसी, 1962, पृष्ठ–1, ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्टचर (बुद्धिस्ट एण्ड हिन्दू पीरियड), सप्तम, पुनर्मुद्रित संस्करण, 1976, पृष्ठ 13, अग्रवाल, वासुदेव शरण, पूर्वोक्त, पृष्ठ 138, गुप्ता, परमेश्वरी लाल, भारतीय वास्तुकला, संशोधित परिवर्द्धित संस्करण, 1989 वाराणसी, पृष्ठ 37
5. पाण्डेय, डाॅ0 जयनारायण : भारतीय कला एवं पुरातत्व, द्वितीय संस्करण, 1991, पृष्ठ 58, अग्रवाल, वासुदेव शरण, पूर्वोक्त, पृष्ठ 138, उपाध्यायय, डॉ0 वासुदेव, प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एवं मंदिर, पटना, द्वितीय संस्करण, 1989, पृष्ठ 56, बाजपेयी, कृष्णदत्त, भारतीय वास्तुकला का इतिहास, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ, 72
6. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ, 15

7. चतुर्वेदी, जगदीश चन्द्र : मध्य प्रदेश के कला मण्डप, प्रथम संस्करण, 1972, ग्वालियर, पृष्ठ 2
8. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ 17
9. बरूआ, बी0एम0 : भरहुत (तीन खण्डों में) प्रथम खण्ड, पृष्ठ–28, डेविड्स रीज, बुद्धिस्ट इण्डिया, 9वाँ संस्करण, वाराणसी, 1970, पृष्ठ 44
10. उपाध्याय, वासुदेव : पूर्वोक्त, पृष्ठ 57
11. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, प्रथम संस्करण, 1971, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृष्ठ 17
12. अग्रवाल, वासुदेव शरण : पूर्वोक्त, पृष्ठ 139
13. सरस्वती, एस0 के0 : ए सर्वे ऑफ इण्डियन स्कल्पचर, द्वितीय संस्करण, 1975, पृष्ठ, 42, मित्रा, देबाला, बुद्धिस्ट मान्यूमेण्ट्स प्रथम संस्करण 1971, कोलकाता (कलकत्ता), पृष्ठ 92–93, बाजपेयी, कृष्ण दत्त, पूर्वोक्त पृष्ठ 73
14. ल्यूडर्स, एच0 : कार्पस इन्सिक्रियएन्स इण्डिकेरम, अभिलेख संख्या– 1, 2, 3, 4, 12,
15. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, पृष्ठ–142, अग्रवाल, वासुदेव शरण, पूर्वोक्त–पृष्ठ–160
16. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–18
17. शर्मा, डॉ0 हरद्वारी लाल : हमारी सौन्दर्य परम्परा, प्रथम संस्करण, 1985, मधु प्रकाशन, इलाहाबाद (प्रयागराज) पृष्ठ–58
18. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–15
19. पाण्डेय डॉ0 जयनारायण : भारतीय कला एवं पुरातत्व, इलाहाबाद (प्रयागराज), द्वितीय संस्करण, पृष्ठ 51, कनिंघम, ए0 द स्तूप ऑफ भरहुत, पृष्ठ–2, सिन्हा, वी0सी0 ग्लोरियस आर्ट ऑफ द शुंगा आर्ट, प्रथम संस्करण, 1985, दिल्ली पृष्ठ–59
20. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ 5
21. रे, नीहार रंजन, मौर्य तथा मौर्योत्तर कला, प्रथम संस्करण, 1979 : नई दिल्ली, पृष्ठ– 37–39
22. बरूआ, बी0एम0 : भरहुत (खण्ड 11) पृष्ठ– 9–11
23. रे, नीहार रंजन : पूर्वोक्त, पृष्ठ–50–52
24. कुमार स्वामी, ए0के0 : हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, लंदन, 1927, पृष्ठ–17
25. रे, नीहार रंजन : पूर्वोक्त, पृष्ठ–52
26. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, प्रथम संस्करण, 1971, पृष्ठ 45
27. श्रीवास्तव, ब्रजभूषण : प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एवं मूर्तिकला, वाराणसी, 2001,पृष्ठ–289–290
28. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–46, उपाध्याय, वासुदेव, प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एवं मंदिर, पटना, द्वितीय संस्करण 1989, पृष्ठ– 46–49
29. रे, निहारंजन : पूर्वोक्त पृ0– 51–52, अग्रवाल, वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ 148, बरूआ, बी0एम0, भरहुत (खण्ड 2) पृष्ठ 42, चित्र संख्या–51

30. कनिंघम, ए0 : द स्तूप ऑफ भरहुत, 1879, पृष्ठ–142
31. राय, एस0 एन0 : भारतीय पुरालिपि एवं अभिलेख, द्वितीय संस्करण 1997, इलाहाबाद, पृष्ठ–177, कनिंघम, ए, पूर्वोक्त, पृष्ठ 142, चित्र संख्या–54
32. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–18
33. बाजपेयी, के0डी0 : जर्नल ऑफ न्यूमिस्मैटिक सोसायटी ऑफ इण्डिया, जिल्द 26, भाग 1(1964), पृष्ठ 14
34. ल्यूडर्स, एच0 कार्पस : इन्सिक्रिपशन्स इण्डिकेरम (2) अभिलेख संख्या– ए–41
35. मिश्र, रमानाथ, भरहुत, पृष्ठ– 46–47
36. अग्रवाल, वासुदेव शरण : पूर्वोक्त, –पृष्ठ 148, उपाध्याय वासुदेव, पूर्वोक्त, पृष्ठ–49, कनिंघम, ए0, पूर्वोक्त पृष्ठ–82, फलक संख्या 13, चित्र संख्या–3, बरूआ, बी0एम0 भरहुत, खण्ड 2 पृष्ठ 42, चित्र संख्या 51, मिश्र, रमानाथ, भरहुत, पृष्ठ 47
37. मुकर्जी, आर के0 : हिन्दू सिविलाइजेशन, पृ0 –194
38. उपाध्याय, वासुदेव : पूर्वोक्त पृ0 49, बरूआ, बी0एम, पूर्वोक्त, पृष्ठ 43, मिश्र, रमानाथ, पूर्वोक्त, पृष्ठ–47, अग्रवाल, वासुदेव शरण, पूर्वोक्त, पृष्ठ–148
39. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, पृष्ठ 45–76,बरूआ, बी0 एम0 पूर्वोक्त, पृ0 86–93, मिश्र, रमानाथ, पूर्वोक्त, पृष्ठ 49
40. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–49, कनिंघम, ए0 पूर्वोक्त फलक 27,12
41. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–49
42. कनिंघम,ए0 : पूर्वोक्त, पृष्ठ 45–76, बरूआ, बी0एम0 भरहुत (खण्ड 2) पृष्ठ–86–93
43. बरूआ, बी0एम0 : भरहुत (खण्ड 2) पृष्ठ–52–53, मिश्र, रमानाथ, भारतीय मूर्तिकला का इतिहास, पृष्ठ–90
44. मिश्र रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–52
45. रे, नीहार रंजन : पूर्वोक्त, पृष्ठ–51–52
46. ल्यूडर्स, एच0 : पूर्वोक्त, अभिलेख संख्या ए017, ए021, ए022, ए055, बी0 56, बी0 72–73
47. मिश्र रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–53
48. मिश्र, रमानाथ : भारतीय मूर्तिकला का इतिहास, पृष्ठ–90
49. जातक, खण्ड–4, पृष्ठ 195, (अनुवादक भदन्त आनंद कौशल्यायन), हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
50. ल्यूडर्स, एच0 : पूर्वोक्त, पृष्ठ 150
51. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, फलक संख्या–42.1
52. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, फलक संख्या–26.7
53. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, फलक संख्या–41.1
54. उपाध्याय, वासुदेव : पूर्वोक्त, पृष्ठ, 43, 59–60, चित्रफलक 13, बरूआ, बी0एम0 पूर्वोक्त, चित्रफलक 45, पृष्ठ–44, मिश्र रमानाथ, भरहुत, पृष्ठ–12, कनिंघम, ए0, पूर्वोक्त, पृष्ठ–78–79, चित्रफलक 28।

55. बरूआ, बी0एम0 : पूर्वोक्त, खण्ड 2 पृष्ठ संख्या– 86–93, कनिंघम ए0 पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या– 45–76
56. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–55
57. मिश्र, रमानाथ : ग्लिम्पसेज ऑफ कंटेपरेरी लाइफ इन दी भरहुत पैनल्स, आर्कियोलॉजिकल कांग्रेस एण्ड सेमिनार पेपर्स (सं0 एस0,बी0, देव, नागपुर 1971) पृष्ठ 284–287
58. मोतीचन्द्र, डॉ0 प्राचीन भारतीय वेशभूषा : प्रथम संस्करण संवत् 2007 विक्रमी, भारत ग्रंथ माला, इलाहाबाद, पृष्ठ–63
59. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–49
60. बरूआ, बी0एम0 : पूर्वोक्त, खण्ड 2, प्लेट–20, 62, 71, अग्रवाल, बासुदेवशरण, पूर्वोक्त–चित्र संख्या–88
61. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–50
62. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, प्लेट 51, काला, सतीश चन्द्र, भरहुत वेदिका, इलाहाबाद, 1957, फलक 5–6
63. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–58–59, कनिंघम, ए0 पूर्वोक्त, फलक संख्या–34,3,
64. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, चित्र फलक संख्या–40
    मोतीचन्द्र, डॉ0 : पूर्वोक्त, पृष्ठ–52–53, बरूआ, बी0एम0 भरहुत, खण्ड 2,फलक संख्या–14, 25, 39, 68
65. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–64–65, रेखाचित्र संख्या–16, 17, 18, 20, 21, 22, 23
67. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–63
68. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, फलक संख्या– 42, 90, 44, 2, 45.2, 48.7
69. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–63, रेखाचित्र संख्या–12
70. मिश्र, रमानाथ : पूर्वोक्त, पृष्ठ–63–64, रेखाचित्र संख्या–9, 10, 11
71. कनिंघम, ए0 : पूर्वोक्त, फलक संख्या–32,5.6,मिश्र रमानाथ पूर्वोक्त, पूर्वोक्त, पृष्ठ–64, रेखाचित्र संख्या–13
72. बरूआ, बी0एम0 : भरहुत (खण्ड 2) पृष्ठ–9–11, रे, निहार रंजन, पूर्वोक्त, पृष्ठ–41, कनिंघम ए0 पूर्वोक्त, फलक–15 ल्यूडर्स, एच0 पूर्वोक्त, पृष्ठ–101,–102
73. मिश्र, रमानाथ : भरहुत, पृष्ठ–245–25, चित्र संख्या–1ए
74. बरूआ, बी0एम0 : भरहुत (खण्ड 2) पृष्ठ–171